संपादकीय

राग-विराग का द्वंद्व

आखिरकार रूस ने यूक्रेन पर औपचारिक आक्रमण कर ही दिया, सारे कूटनीतिक प्रयास विफल हो गए। अब यूक्रेन के लिए बहुत देर तक अपने दम पर टिके रहना मुश्किल होगा। ऐसे में दो ही रास्ते बचते हैं, अमेरिका सहित नाटो देश या तो खुलकर यूक्रेन को सैन्य सहयोग दें या फिर अधिक जानमाल का नुकसान हुए दिए बिना यूक्रेन को रूस के पाले में चले जाने दें। तरह-तरह के और कड़े से कड़े प्रतिबंध अप्रासंगिक लगते हैं और इस समय समस्या के समाधान नहीं हो सकते। रूस के हमले के पहले और बाद में विश्व के प्रमुख देशों की हस्तियों ने काफी कुछ बोलने की हिम्मत तो की है, लेकिन सैन्य सहयोग देने की जहमत नहीं उठाई। प्रतिबंध में प्रतिबंध लगाने वालों का भी नुकसान होता है। भला रूस जैसे ताकतवर देश को ऐसे प्रतिबंधों की परवाह क्यों करनी चाहिए। उसने तो अपने इरादे पहले ही स्पष्ट कर दिए थे और अब किसी भी सैन्य हस्तक्षेप के मुहतोड़ जवाब देने का संकल्प जाहिर कर दिया है। इसलिए चाहे अमेरिका हो या ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, जापान हों, सब कड़ी प्रतिक्रिया तो दे रहे हैं, पर सहयोग करने से हाथ खड़े कर रहे हैं। उनके लिए कुछ करने की बाध्यता भी नहीं, क्योंकि यूक्रेन नाटो का सदस्य नहीं है। आखिर ये देश दूसरे के लिए बड़ा जोखिम क्यों उठाएँ। अमेरिका जैसा देश रूस से लोहा लेने की क्षमता तो रखता है, पर वह दूसरों के लिए कहाँ-कहाँ झगड़ा मोल लेते रहेगा। उसमें भी रूस के खिलाफ युद्ध में कूदने का मतलब महाविनाश कराने और करने के लिए उद्धत होना है, इसलिए अमेरिकी राष्ट्रपति ब्राइडेन ने संहार की सारी जिम्मेदारी रूस पर डाल दी है। परंतु आगे भी अमेरिका ऐसा ही करता रहेगा - जरूरी नहीं। यदि उसका सीधा हित प्रभावित हुआ तो वह इस संघर्ष-समर को महासमर बना सकता है।

जहाँ तक भारत की बात है, वह ऐसी स्थिति में नहीं कि औरों की तरह ज्यादा बोलने का साहस कर सके। रूस पर आधे से अधिक सामरिक अस्त्र-शस्त्रों के लिए निर्भरता है, साथ ही वह संकट के समय भरोसे का साथी भी रहा है। भारत के हित इधर अमेरिका और यूरोपीय देशों से भी बहुत हद तक जुड़ते गए हैं, जिस कारण रूस का मंथर गति से चीन की तरफ झुकाव बढ़ा है। रूस और चीन समझते हैं कि वे एकजुट हो जाएँ तो अन्य देशों का बड़ा समूह भी उन्हें पछाड़ नहीं सकता। भारत ने रूस द्वारा क्रीमिया को स्वतंत्र कराने की कार्रवाई का समर्थन किया था। इसी तरह यूक्रेन पर हमले की निंदा करना तो दूर, यूक्रेन के राजदूत द्वारा जगाने और जामवंत द्वारा हनुमान जी को उनकी शक्ति का एहसास कराने की तरह ही पीएम मोदी को उनके विश्व नेता की छवि की याद दिलाने के बावजूद भारत उचित बोलने से भी कतरा रहा है, वह भी तब जब सोवियत रूस से अलग होने के बाद यूक्रेन ने एशिया में सबसे पहले अपना दूतावास भारत में ही खोला था। यूक्रेन को पहले पहल मान्यता देने वाले देशों में भारत का नाम शुमार है, किंतु इस समय भारत की सारी चिंता घुमाफिराकर अपने छात्रों-नागरिकों को यूक्रेन से निकालने तक सीमित हो गई है। यह काम यूक्रेन पर रूस के प्रायोजित हमले से पहले संपन्न न होना अदूरदर्शिता ही दर्शाता है। विश्वगुरु बनने के लिए सपने बुनना और उसके लिए सद्प्रयास करना प्रशंसनीय है, पर उससे पहले आत्मनिर्भर बनकर इतनी नैतिक व सामरिक शक्ति अवश्य अर्जित कर लेनी चाहिए, जिससे न केवल सही को सही और गलत को गलत कहा जा सके, अपितु जो उचित लगे, उसे किया भी जा सके।

बहरहाल, रूस-यूक्रेन के बीच का संघर्ष-समर राग-विराग का अनूठा द्वंद्व भी है। यूक्रेन ने स्वायत्त-स्वतंत्र होने के पहले और बाद में प्रगति की है, पर वह सामरिक तौर पर समर्थ नहीं बन सका। नेतृत्व की अलग-अलग विखंडित सोच के कारण रूस से जलता-डरता रहा और कहीं न कहीं उसके बल को अपने पक्ष का भी मानता रहा। दूसरी ओर, रूस अलग यूक्रेन को 'अपना' मानते रहने के पूर्ववर्ती संस्कार का संवरण नहीं कर पाया। वह सोवियत संघ के संपन्न सामरिक सामर्थ्य का अधिक अंश में उत्तराधिकारी बना। मजबूत इरादे वाले और लंबे समय तक बने रहने वाले पुतिन जैसे शासनाध्यक्ष के नेतृत्व में रूस अपनी विघटित शक्ति को संयोजित करने का लगातार ईमानदार प्रयास करता रहा, नतीजा स्पष्ट है कि कोई उससे टकराने का साहस नहीं कर रहा!